मणिभद्र वीर की स्तुति

॥ दोहा ॥

वंदूं पाँचों परम-गुरु, चौबीसों जिनराज |
करूँ शुद्ध आलोचना, शुद्धि-करन के काज ||१||

(सखी छन्द)

सुनिये जिन! अरज हमारी, हम दोष किये अति-भारी |
तिनकी अब निवर्त्ति-काजा, तुम सरन लही जिनराजा ||२||

इक-बे-ते-चउइंद्री वा, मनरहित-सहित जे जीवा |
तिनकी नहिं करुणा धारी, निरदई हो घात विचारी ||३||

समरंभ-समारंभ-आरंभ, मन-वच-तन कीने प्रारंभ |
कृत-कारित-मोदन करिके, क्रोधादि-चतुष्टय धरिके ||४||

शत-आठ जु इमि भेदनते, अघ कीने परिछेदनते |
तिनकी कहूँ को-लों कहानी, तुम जानत केवलज्ञानी ||५||

विपरीत एकांत-विनय के, संशय-अज्ञान कुनय के |
वश होय घोर अघ कीने, वचतें नहिं जायँ कहीने ||६||

कुगुरुन की सेवा कीनी, केवल अदया-करि भीनी |
या-विधि मिथ्यात भ्रमायो, चहुँगति-मधि दोष उपायो ||७||

हिंसा पुनि झुठ जु चोरी, पर वनिता सों दृग-जोरी |
आरंभ-परिग्रह भीनो, पन-पाप जु या-विधि कीनो ||८||

सपरस-रसना-घ्रानन को, चखु-कान-विषय-सेवन को |
बहु-करम किये मनमाने, कछु न्याय-अन्याय न जाने ||९||

फल पंच-उदंबर खाये, मधु-मांस-मद्य चित चाये |
नहिं अष्ट-मूलगुण धारे, सेये कुव्यसन दु:खकारे ||१०||

दुइबीस-अभख जिन गाये, सो भी निश-दिन भुंजाये |
कछु भेदाभेद न पायो,ज्यों-त्यों करि उदर भरायो ||११||

अनंतानुबंधी जु जानो, प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो |
संज्वलन चौकड़ी गुनिये,सब भेद जु षोडश मुनिये ||१२||

परिहास-अरति-रति-सोग, भय-ग्लानि-तिवेद-संयोग |
पनबीस जु भेद भये इम, इनके वश पाप किये हम ||१३||

eAstroHelp

निद्रावश शयन कराई, सुपने-मधि दोष लगाई |
फिर जागि विषय-वन धायो, नानाविध विष-फल खायो ||१४||

आहार-विहार-निहारा, इनमें नहिं जतन विचारा |
बिन देखे धरी-उठाई, बिन-शोधी वस्तु जु खाई ||१५||

तब ही परमाद सतायो, बहुविधि-विकलप उपजायो |
कछु सुधि-बुधि नाहिं रही है, मिथ्यामति छाय गई है ||१६||

मरजादा तुम ढिंग लीनी, ताहु में दोष जु कीनी |
भिन-भिन अब कैसे कहिये, तुम ज्ञान-विषै सब पइये ||१७||

हा हा! मैं दुठ अपराधी, त्रस-जीवन-राशि विराधी |
थावर की जतन न कीनी, उर में करुणा नहिं लीनी ||१८||

पृथिवी बहु-खोद कराई, महलादिक जागाँ चिनाई |
पुनि बिन-गाल्यो जल ढोल्यो, पंखा ते पवन बिलोल्यो ||१९||

हा हा! मैं अदयाचारी, बहु हरितकाय जु विदारी |
ता-मधि जीवन के खंदा, हम खाये धरि आनंदा ||२०||

हा हा! परमाद-बसाई, बिन देखे अगनि जलाई |
ता-मध्य जीव जे आये, ते हू परलोक सिधाये ||२१||

बीध्यो अन राति पिसायो, ईंधन बिन-सोधि जलायो |
झाड़ू ले जागां बुहारी, चींटी आदिक जीव बिदारी ||२२||

जल-छानि जिवानी कीनी, सो हू पुनि डारि जु दीनी ।
नहिं जल-थानक पहुँचाई, किरिया-बिन पाप उपाई ।।२३।।

जल-मल मोरिन गिरवायो, कृमि-कुल बहुघात करायो |
नदियन-बिच चीर धुवाये, कोसन के जीव मराये ||२४||

अन्नादिक शोध कराई, तामें जु जीव निसराई |
तिनका नहिं जतन कराया, गलियारे धूप डराया ||२५||

पुनि द्रव्य-कमावन काजे, बहु आरंभ-हिंसा साजे |
किये तिसनावश अघ भारी, करुणा नहिं रंच विचारी ||२६||

eAstroHelp

इत्यादिक पाप अनंता, हम कीने श्री भगवंता |
संतति चिरकाल उपार्इ, वाणी तें कहिय न जार्इ ||२७||

ताको जु उदय अब आयो, नानाविध मोहि सतायो |
फल भुंजत जिय दु:ख पावे, वच तें कैसे करि गावे ||२८||

तुम जानत केवलज्ञानी, दु:ख दूर करो शिवथानी |
हम तो तुम शरण लही है, जिन तारन विरद सही है ||२९||

इक गाँवपती जो होवे, सो भी दु:खिया दु:ख खोवे |
तुम तीन-भुवन के स्वामी, दु:ख मेटहु अंतरजामी ||३०||

द्रोपदि को चीर बढ़ायो, सीता-प्रति कमल रचायो |
अंजन से किये अकामी, दु:ख मेटो अंतरजामी ||३१||

मेरे अवगुन न चितारो, प्रभु अपना विरद सम्हारो |
सब दोष-रहित करि स्वामी, दु:ख मेटहु अंतरजामी ||३२||

इंद्रादिक पद नहिं चाहूँ, विषयनि में नाहिं लुभाऊँ |
रागादिक-दोष हरीजे, परमातम निज-पद दीजे ||३३||

(दोहे)
दोष-रहित जिनदेव जी, निज-पद दीज्यो मोय |
सब जीवनि के सुख बढ़े, आनंद-मंगल होय ||
अनुभव-माणिक-पारखी, 'जौहरि' आप जिनंद |
ये ही वर मोहि दीजिए, चरण-शरण-आनंद ||

eAstroHelp